महात्मा गाँधी एक आन्दोलनकारी के रूप में

डॉ0 प्रभा गौतम,

एसोसिएट प्रोफेसर, राजनीति विज्ञान विभाग, विद्यान्त हिन्दू पी0जी0 कॉलेज, लखनऊ, उ0प्र0

शोध सारांश

गाँधी जी का राजनीतिक जीवन दक्षिण अफ्रीका में सफल आन्दोलन को नेतृत्व प्रदान कर प्रारम्भ हुआ, तत्पश्चात् वह भारत आये। भारत में आगमन के पश्चात् उन्होंने चम्पारण, खेड़ा के कृषक आन्दोलन एवं अहमदाबाद में मिल मजदूरों के आन्दोलन को सफल नेतृत्व प्रदान किया। गाँधीजी द्वारा सन् 1920 में सर्वप्रथम राष्ट्रीय स्तर पर 'असहयोग आन्दोलन' का नेतृत्व किया गया, जो चौरी–चौरा हिंसा के उपरान्त गाँधीजी द्वारा स्थगित कर दिया गया, द्वितीय दाण्डी में नमक कानून का उल्लंघन कर सन् 1930 में उन्होंने 'सविनय अवज्ञा आन्दोलन' का प्रारम्भ किया। 1942 में गाँधीजी के नेतृत्व में 'करो या मरो' के नारे के साथ 'भारत छोड़ो आन्दोलन' को प्रारम्भ करने का निर्णय लिया गया। यह सभी राष्ट्रीय आन्दोलन भले ही तात्कालिक रूप से लक्ष्यप्राप्ति में सफल नहीं रहे, लेकिन भारतीय स्वतन्त्रता का आधार तैयार करने में और गाँधीजी को एक सर्वपक्षीय आन्दोलनकर्ता के रूप में स्थापित करने में पूर्णतः सफल रहे।

मुख्य शब्द– *गाँधीजी, आन्दोलन, स्वतन्त्रता, नेतृत्व, कांग्रेस, अहिंसा*

'आन्दोलन' एक ऐसा शब्द है जिसने इतिहास निर्मित किये हैं। शासन व्यवस्थाओं, सत्ताओं, समाज को परिवर्तन करने में विश्व में आन्दोलनों की प्रमुख भूमिका रही है। आन्दोलन समाज, सत्ता, धार्मिक, सांस्कृतिक, पर्यावरणीय, आर्थिक परिस्थितियों के विरुद्ध आक्रोश से उत्पन्न समूह का तन्त्र या व्यवस्था के विरुद्ध संघर्ष है। संघर्ष और आन्दोलन शब्द समानार्थी प्रतीत होते हैं लेकिन प्रकृति की दृष्टि से दोनों में विभिन्नता है। संघर्ष जहाँ स्थिति है तो आन्दोलन उद्देश्यों को प्राप्त करने की प्रक्रिया है।

भारत में आन्दोलनों का अनवरत इतिहास रहा है। राजनीतिक रूप से विशाल संगठित आन्दोलन का प्रारम्भ ब्रिटिश सरकार के शासनकाल में हुआ। महात्मा गाँधी के भारतीय राजनीति में पदार्पण के पश्चात् इसको चरमगति प्राप्त हुई। सन् 1893 में गाँधीजी वकालत के लिए दक्षिण अफ्रीका गये जहाँ उन्हें नस्लीय भेदभाव का सामना करना पड़ा। दक्षिण अफ्रीका से गाँधीजी की राजनीतिक आन्दोलन की यात्रा प्रारम्भ हुई, जहाँ उन्होंने सत्याग्रह का प्रथम बार प्रयोग किया एवं उनके राजनीतिक विचारों व नेतृत्व कौशल का विकास भी दक्षिण अफ्रीका में उनके आन्दोलन के फलस्वरूप ही हुआ। अफ्रीकी सरकार द्वारा 1906 में 'एशियाटिक रजिस्ट्रेशन एक्ट' पारित किया गया जिसमें एशियाई व्यक्तियों के लिए रजिस्ट्रेशन के साथ अँगूठों के निशान देना आवश्यक था, यह अत्यन्त अपमानजनक स्थिति थी जो व्यक्ति के गौरव व सम्मान के विरुद्ध थी। गाँधीजी इस एक्ट के विरुद्ध एक प्रतिनिधि मण्डल लेकर ब्रिटेन भी गये, लेकिन निष्फल रहे। गाँधीजी के नेतृत्व में भारतीयों द्वारा अपने स्वाभिमान की रक्षार्थ इस एक्ट के बहिष्कार का निर्णय लिया गया, फलस्वरूप बड़ी संख्या में भारतीय जेल भेज दिये गये। इस आन्दोलन से उत्पन्न परिस्थितियों से सरकार असमंजस की

स्थिति में थी। इसी मध्य भारतीयों द्वारा भी, एक समझौते द्वारा स्वेच्छा से रजिस्ट्रेशन कराया गया, लेकिन ट्रांसवाल के अधिकारियों द्वारा समझौते की अवहेलना की गई तो पुनः संघर्ष प्रारम्भ किया गया। गाँधीजी के नेतृत्व में 2,000 व्यक्तियों के समूह ने ट्रांसवाल तक मार्च किया। यह अनोखा आन्दोलन था, जिसमें सत्य–असत्य से, न्याय–अन्याय से, अहिंसा–हिंसा से संघर्ष कर रही थी। परिणामस्वरूप एक जाँच कमेटी की रिपोर्ट आने के पश्चात् एशियाटिक कानून को वापस ले लिया गया।

बैरिस्टर गाँधीजी एक सफल आन्दोलनकारी के रूप में सन् 1914 में भारत वापस आये और भारतीय राजनीति में रूचि लेने लगे। नेतृत्व की दृष्टि से यह समय भारत में शून्यता का काल था। भारत के स्वतन्त्रता आन्दोलन को दो भागों में विभक्त किया जा सकता है– गाँधी पूर्व युग व गाँधी युग। गाँधी पूर्व काल वैधानिक सुधारों की माँग तक ही सीमित थी। गाँधीजी द्वारा प्रथम विश्वयुद्ध में अंग्रेजी सरकार की भारतीयों द्वारा सहायता का समर्थन किया गया, लेकिन बाद में परिस्थितियाँ परिवर्तित हुई। कांग्रेस में इस समय गाँधीजी के नेतृत्व की स्वीकार्यता में वृद्धि हो रही थी।

भारत आगमन के पश्चात् गाँधीजी द्वारा सर्वप्रथम चम्पारण सत्याग्रह का नेतृत्व किया गया। उत्तरी बिहार के चम्पारण में कृषकों को तीन कठिया प्रथा के अन्तर्गत (जिसमें एक बीघे के 3/20 भाग पर) नील की खेती आवश्यक रूप से करनी पड़ती थी, जिसको अंग्रेज मनमाने दामों पर खरीदते थे, फलतः कृषकों में इस शोषण के विरुद्ध आक्रोश था। गाँधीजी ने चम्पारण के एक कृषक राजकुमार शुक्ल के आमंत्रण पर इस आक्रोश को नेतृत्व प्रदान किया, जिसका प्रारम्भ 1917 में हुआ। राजेन्द्र प्रसाद, कृपलानी आदि ने भी इसमें गाँधीजी का सहयोग किया। कृषकों द्वारा नील का उत्पादन बंद कर दिया गया, बहुत से सत्याग्रहियों को बंदी बनाया गया एवं उन पर बल प्रयोग भी किया गया। दक्षिण अफ्रीका में प्रयुक्त अस्त्र सत्याग्रह व अहिंसा का प्रयोग इस आन्दोलन में भी गाँधीजी द्वारा किया गया। गाँधीजी के नेतृत्व में कृषकों द्वारा प्रशासनिक अत्याचार का साहसपूर्वक सामना किया गया। फलतः एक जाँच कमेटी (जिसमें जमींदार, सरकार, निलहे गौरे सम्मिलित थे) की रिपोर्ट के आधार पर सरकार द्वारा चम्पारण कृषि अधिनियम पारित किया गया, जिसमें अत्यधिक मुनाफे पर रोक लगा दी गई। इस प्रकार गाँधीजी का भारत में प्रथम सत्याग्रह आन्दोलन पूर्णतः सफल रहा। इस विषय में गाँधीजी ने अपनी आत्मकथा 'सत्य के प्रयोग' के पाँचवें भाग के बारहवें अध्याय 'नील का दाग' में लिखा है कि, ''लखनऊ जाने से पूर्व तक मैं चम्पारण का नाम भी नहीं जानता था। नील की खेती होती है, इसका ख्याल भी न के बराबर था। इसके कारण हजारों किसानों को कष्ट भोगना पड़ता है, इसकी भी मुझे जानकारी नहीं थी।''

गाँधीजी द्वारा भारत में 1918 में खेड़ा सत्याग्रह का भी नेतृत्व किया गया। गुजरात के खेड़ा में यह भी एक कृषक आन्दोलन था जो बम्बई सरकार के विरुद्ध था जहाँ सूखे के कारण फसलें नष्ट हो गई थीं, इसके उपरान्त भी सरकार द्वारा कृषकों की मालगुजारी माफी की माँग को स्वीकार नहीं किया जा रहा था, जबकि सरकारी नियमानुसार उत्पादन यदि पच्चीस प्रतिशत कम होता है तो मालगुजारी माफी का प्रावधान था। फलतः गाँधीजी के नेतृत्व में किसानों द्वारा सत्याग्रह की घोषणा कर, लगान न देने का निर्णय लिया गया, प्रतिक्रियास्वरूप प्रशासन द्वारा बहुत से सत्याग्रही किसानों को जेल भेजा गया, जुर्माने किये गये, मकान जब्त किये गये। गाँधीजी द्वारा किसानों को कुर्क खेतों से फसल काटकर लाने के लिए कहा गया, बढ़ते हुए विरोध एवं आन्दोलन को देखते हुए सरकार द्वारा बिना सार्वजनिक घोषणा किये हुए किसानों

से लगान की वसूली को बंद कर दिया। यह किसानों के लिए एक नैतिक विजय थी। इस विषय में गाँधीजी द्वारा अपनी आत्मकथा में वर्णित किया गया है कि, ''गुजरात के प्रजा जीवन में नया तेज आया, नया उत्साह भर गया। सबने समझा कि प्रजा की मुक्ति का आधार स्वयं अपने ऊपर ही है, त्याग शक्ति पर है, सत्याग्रह ने खेड़ा के द्वारा गुजरात में जड़ें जमाईं।''

गुजरात के शहर अहमदाबाद में मिल मजदूरों के आन्दोलन का नेतृत्व भी गाँधीजी द्वारा किया गया जहाँ मिल मालिकों और मिल मजदूरों के मध्य बोनस को लेकर विवाद हुआ। 1917 में अहमदाबाद में प्लेग महामारी के कारण मजदूरों के पलायन को रोकने के लिए मिल मालिकों द्वारा बोनस की घोषणा की गई, लेकिन प्लेग के प्रकोप में कुछ कमी आने के पश्चात् बोनस बंद कर दिया गया। प्रथम विश्वयुद्ध के समय देश में महंगाई चरमोत्कर्ष पर थी, इस कारण मिल मजदूरों द्वारा इसे मासिक वेतन में ही समाहित करने की माँग की जा रही थी। अनुसुया बेन साराभाई, जो अभी तक मजदूरों के आन्दोलन का नेतृत्व कर रही थीं, ने गाँधीजी को इस आन्दोलन का नेतृत्व करने के लिए आमन्त्रित किया। मजदूरों की माँग थी कि उनके वेतन में पचास प्रतिशत वृद्धि की जाये। गाँधीजी मजदूरों के साथ आमरण अनशन पर बैठे, विवाद के न्यायाधिकरण में जाने के पश्चात् गाँधीजी के सुझाव पर मजदूरों ने 35 प्रतिशत वेतनवृद्धि को स्वीकार कर लिया। इस आन्दोलन में प्रथम बार गाँधीजी द्वारा आमरण अनशन के अस्त्र का प्रयोग किया गया, जिसने मजदूरों को संगठित किया। गाँधीजी का 'ट्रस्टीशिप का सिद्धान्त' भी इस आन्दोलन की विचार व्युत्पत्ति है।

असहयोग आन्दोलन महात्मा गाँधी के नेतृत्व में चलाये जाने वाला प्रथम जनआन्दोलन था जिसका स्वरूप राष्ट्रीय था। कांग्रेस का सन् 1920 में गाँधीजी के नेतृत्व को स्वीकार कर आन्दोलन का निर्णय करना एक क्रान्तिकारी कदम था। गाँधीजी का भारतीय राजनीति में पदार्पण एक सहयोगी के रूप में हुआ था, लेकिन जालियाँवाला बाग हत्याकाण्ड, पंजाब में मार्शल लॉ, हंटर कमेटी की जाँच, रौलेट एक्ट व अंग्रेजी सरकार के अन्य क्रियाकलापों से उनका अंग्रेजी सरकार पर से विश्वास उठ गया। गाँधीजी द्वारा रॉलेट एक्ट के विरोध का आह्वान किया गया। फलस्वरूप बाजारों, स्कूलों आदि के बंद होने के कारण जनसामान्य का जीवन ठहर गया। पंजाब प्रान्त में इसका विशिष्टतः विरोध हो रहा था। 13 अप्रैल 1919 को जालियाँवाला बाग हत्याकाण्ड एक अंग्रेज अधिकारी डायर के नेतृत्व में हुआ, जिसमें 1200 लोग मारे गये और 1600 से लेकर 1700 लोग घायल हुए।

उपरोक्त परिस्थितियों में 4 सितम्बर 1920 में कांग्रेस के कलकत्ता अधिवेशन में, जो लाला लाजपत राय की अध्यक्षता में हुआ, गाँधीजी का असहयोग आन्दोलन का प्रस्ताव सी0आर0 दास, वी0सी0 पाल, एनी बेसेन्ट, जिन्ना और मालवीय आदि के विरोध के उपरान्त 873 के मुकाबले 1855 मतों से पारित हुआ। दिसम्बर 1920 में कांग्रेस के नियमित सम्मेलन में सी0आर0 दास, लाला लाजपत राय, मोतीलाल नेहरु की स्वीकृति भी इस प्रस्ताव को प्राप्त हो गयी। गाँधीजी द्वारा स्कूल, कॉलेजों, न्यायालयों के बहिष्कार, पदों, उपाधियों के परित्याग, सरकारी व अर्द्धसरकारी, उत्सवों के बहिष्कार, अस्पृश्यता के अन्त, विदेशी वस्तुओं के बहिष्कार को इस आन्दोलन के प्रमुख कार्यक्रम बताये गये। हिन्दू–मुस्लिम एकता को सुदृढ़ करने के लिए खिलाफत आन्दोलन का भी सहयोग किया गया। कांग्रेस द्वारा इस दौरान 40,000 स्वयंसेवकों की दल में भर्ती की गयी। महात्मा गाँधी द्वारा 'केसर–ए–हिन्द' की उपाधि का परित्याग कर दिया गया। काशी विद्यापीठ, गुजरात विद्यापीठ, बिहार विद्यापीठ, नेशनल कॉलेज लाहौर आदि शिक्षण संस्थाओं की स्थापना की गई। गाँधीजी के आह्वान पर सरकारी

आँकड़ों के अनुसार 1921 में 396 हड़ताल हुई, जिसमें 6 लाख से ज्यादा श्रमिकों ने भाग लिया व 70 लाख की धनहानि हुई। असहयोग आन्दोलन में किसानों, श्रमिकों सहित सभी वर्गों ने भाग लिया। 1857 के प्रथम स्वतन्त्रता विद्रोह के पश्चात् यह अंग्रेजी सरकार को कम्पित कर देने वाला प्रथम आन्दोलन था, अपितु यह उससे भी ज्यादा प्रभावशाली था, क्योंकि यह एक जनआन्दोलन था जो कि अहिंसक था। अंग्रेजों ने सेडिशन एक्ट के अन्तर्गत करीब 25 हजार व्यक्तियों की गिरफ्तारी की। 1 फरवरी 1922 को गाँधीजी द्वारा गवर्नर जनरल को सूचित किया गया कि यदि सभी अहिंसक आन्दोलनकारी रिहा नहीं किये गये तो वह सामूहिक सविनय अवज्ञा आन्दोलन प्रारम्भ करेंगे। सरकार को सात दिन का समय दिया गया, लेकिन इसी समय 5 फरवरी 1922 में चौरी–चौरा हिंसा के पश्चात् गाँधीजी द्वारा यह आन्दोलन स्थगित कर दिया गया, उन्होंने कहा कि किसी भी तरह की उत्तेजना को निहत्थे और एक तरह से भीड़ की दया पर निर्भर व्यक्तियों की घृणित हत्या के आधार पर उचित नहीं ठहराया जा सकता। चौरी–चौरा घटना में एक थानेदार एवं 21 सिपाहियों की मृत्यु हुई। फलतः 12 फरवरी 1922 को बारदोली की कांग्रेस की बैठक में इस आन्दोलन को समाप्त करने का निर्णय लिया गया। गाँधीजी ने यंग इण्डिया में लिखा, ''आन्दोलन को हिंसक होने से बचाने के लिए मैं हर एक अपमान, हर एक यातनापूर्ण बहिष्कार, यहाँ तक कि मौत को भी सहने को तैयार हूँ।''

गाँधीजी के इस निर्णय की कांग्रेस में आलोचना हुई। मोतीलाल नेहरु ने कहा कि, ''यदि कन्याकुमारी के एक गाँव ने अहिंसा का पालन नहीं किया तो इसकी सजा हिमालय के एक गाँव को क्यों मिलनी चाहिए।'' सुभाष चन्द्र बोस ने भी इस विषय में कहा कि, ''ठीक समय जबकि जनता का उत्साह चरमोत्कर्ष पर था, वापस लौटने का आदेश देना राष्ट्रीय दुर्भाग्य से कम नहीं था। असहयोग आन्दोलन को कांग्रेस के लिए महत्त्व की दृष्टि से देखें तो कांग्रेस का पार्टी संगठन बहुत सुदृढ़ हो गया, दूरस्थ ग्रामों तक इसका प्रसार हो गया, फलतः कांग्रेस का आधार राष्ट्रव्यापी हो गया एवं उसे गाँधीजी द्वारा क्रान्तिकारी जनआन्दोलन का प्रतीक बना दिया।

सविनय अवज्ञा आन्दोलन गाँधीजी के नेतृत्व में अंग्रेजी सरकार के विरुद्ध द्वितीय राष्ट्रीय जनआन्दोलन था। दिसम्बर 1928 में कांग्रेस के अधिवेशन में नेहरु रिपोर्ट की स्वीकार्यता को लेकर मतभेद थे। गाँधीजी द्वारा मध्यस्थता का प्रस्ताव प्रस्तुत किया गया, जिसमें कहा गया कि, ''यदि ब्रिटिश संसद इस विधान को ज्यों का त्यों 31 दिसम्बर, 1929 तक या उससे पूर्व स्वीकार कर ले तो कांग्रेस इस विधान को स्वीकार कर लेगी, यदि ब्रिटिश संसद उस तिथि तक स्वीकार नहीं करती है या अस्वीकार करती है तो कांग्रेस देश को करबंदी की सलाह देकर तथा अन्य उपायों के आधार पर, जिसे बाद में निश्चित किया जायेगा, अहिंसात्मक असहयोग आन्दोलन चलायेगी।'' कांग्रेस द्वारा गाँधीजी के प्रस्ताव को स्वीकृति प्रदान कर दी गयी। इसी मध्य इंग्लैण्ड में मजदूर दल की सरकार के सत्ता में आने के पश्चात् भी अंग्रेजी सरकार का भारतीय नीतियों में कोई परिवर्तन नहीं आया। फलतः कांग्रेस के लाहौर अधिवेशन में (1929) में पूर्ण स्वाधीनता का प्रस्ताव रात्रि में 12 बजे रावी नदी के तट पर भारत का तिरंगा फहराकर किया गया। कांग्रेस द्वारा अपने विधान में 'स्वराज' का अर्थ पूर्ण स्वाधीनता कर दिया गया।

इस समय देश की राजनीतिक स्थिति के साथ आर्थिक स्थिति भी चिन्तनीय थी। ''कृषि उपज के भाव 50 प्रतिशत से अधिक गिर गये थे, किसानों की हालत इतनी दयनीय थी कि वे एक गज कपड़ा व एक बोतल लैम्प का तेल भी नहीं खरीद सकते थे। सीधा–साधा तथ्य यह था कि वे कर, लगान और ऋण अदा करने में असमर्थ थे।''

(च्संांए डींजउं ळंदकीपए चण 173)। इसी के साथ क्रान्तिकारी आन्दोलन लाहौर षड्यन्त्र अभियोग आदि के कारण भारत का राजनीतिक वातावरण भी अत्यधिक उत्तेजनापूर्ण था। उपरोक्त परिस्थितियों में अहिंसक आन्दोलन का गाँधीजी का प्रस्ताव उद्वेलित भारत को मार्ग दिखाने के लिए आवश्यक था। 26 जनवरी 1930 को पूर्ण स्वाधीनता दिवस सम्पूर्ण देश में बहुत उत्साहपूर्वक मनाया गया।

उपरोक्त परिस्थितियों में साबरमती में 14 फरवरी से 16 फरवरी 1930 तक हुई कांग्रेस की कार्यकारिणी की बैठक में गाँधीजी को सविनय अवज्ञा आन्दोलन को संचालित करने के लिए अधिकृत कर दिया गया। गाँधीजी ने आन्दोलन को प्रारम्भ करने से पूर्व अपने साप्ताहिक पत्र 'यंग इण्डिया' के एक लेख के माध्यम से वायसराय के सम्मुख ग्यारह शर्तें रखीं और लिखा कि यदि सरकार के द्वारा उनकी माँगें मान ली जाती हैं तो वह आन्दोलन को प्रारम्भ नहीं करेंगे। इरविन द्वारा गाँधीजी को जो उत्तर भेजा गया, उस पर गाँधीजी ने कहा कि मैंने घुटने टेककर रोटी माँगी थी परन्तु मुझे पत्थर मिले। प्रशासन द्वारा कांग्रेस कार्यकर्ताओं की गिरफ्तारी प्रारम्भ कर दी गयी, फलतः गाँधीजी द्वारा दाण्डी में समुद्र तट पर नमक बनाकर, नमक कानून को तोड़कर आन्दोलन को प्रारम्भ करने का निर्णय लिया गया। गाँधीजी ब्रिटिश सरकार के नमक एकाधिकार के विरुद्ध एक तीव्र प्रतिरोधात्मक आन्दोलन द्वारा जनसमूह को आन्दोलित कर विशाल स्तर पर सविनय अवज्ञा आन्दोलन का प्रारम्भ करना चाहते थे। उन्होंने 12 मार्च 1930 को 79 कार्यकर्ताओं के साथ साबरमती के आश्रम से प्रस्थान कर 200 किमी0 की पदयात्रा 24 दिन में पूर्ण कर 6 अप्रैल को दाण्डी तट पर नमक बनाकर नमक कानून को तोड़कर सविनय अवज्ञा आन्दोलन का प्रारम्भ किया। 6 अप्रैल को गाँधीजी द्वारा इस आन्दोलन के लिए कुछ कार्यक्रम घोषित किये गये। यथा–नमक कानून का उल्लंघन, विदेशी वस्त्रों का बहिष्कार, शराब, अफीम, विदेशी वस्त्रों की दुकानों पर स्त्रियों द्वारा धरना, अस्पृश्यता का त्याग, सरकारी शिक्षण संस्थाओं व नौकरियों का परित्याग आदि। इसके पश्चात् 6 मई को करबंदी को भी इस कार्यक्रम में सम्मिलित कर लिया गया।

इस कार्यक्रम की घोषणा के पश्चात् सम्पूर्ण देश घोषित कार्यक्रमानुसार आन्दोलनरत हो गया। 4 मई को गाँधीजी की गिरफ्तारी हुई, जिसके फलस्वरूप बम्बई, कलकत्ता व अन्य स्थानों पर पूर्ण हड़ताल हुई जिसमें सभी वर्गों का सहयोग रहा। अंग्रेज सरकार द्वारा इस आन्दोलन के विस्तार से चिन्तित होकर दमनात्मक कार्यवाही प्रारम्भ कर दी गई। प्रदर्शनों, सार्वजनिक सभाओं आदि पर निर्ममतापूर्वक लाठी प्रहार किया जाने लगा। धारासना और बडाला के नमक डिपो पर धावा बोलने वाले स्वयंसेवक पाशविक लाठी प्रहार का शिकार हुए, छात्रों और महिलाओं पर भी अत्याचार किये गये। कांग्रेस को अवैध संगठन घोषित कर 90 हजार सत्याग्रहियों को जेल भेज दिया गया। आन्दोलन को कमजोर करने के लिए सम्पत्ति ग्रहण, हरण व नीलामी को सहारा बनाया गया। जनता द्वारा भी प्रतिक्रियास्वरूप कुछ हिंसक कार्यवाहियाँ की गयीं। इस आन्दोलन का विशिष्ट तथ्य यह रहा कि उत्तर–पश्चिमी सीमा प्रान्त के अतिरिक्त मुस्लिम इस आन्दोलन से विरत रहे।

साइमन कमीशन द्वारा भारतीय समस्याओं के हल निकालने के लिए दिये गये सुझाव के अनुसार होने वाले प्रथम गोलमेज सम्मेलन का कांग्रेस द्वारा बहिष्कार किया गया। जयकर तथा सप्रू की मध्यस्थता से 5 मार्च 1931 को गाँधी–इरविन समझौता हुआ, जिसमें गाँधीजी द्वितीय गोलमेज सम्मेलन में सहभागिता के लिए सहमत हुए तथा सरकार द्वारा राजनीतिक बंदियों और जब्त सम्पत्ति की वापसी का आश्वासन दिया गया। गाँधीजी द्वारा कांग्रेस के सम्पूर्ण प्रतिनिधि

के रूप में द्वितीय गोलमेज सम्मेलन में प्रतिभाग किया गया, किन्तु जिन्ना के साम्प्रदायिक विचार, जातिगत माँगों व ब्रिटिश सरकार की अनुदारता के कारण इस सम्मेलन में किसी निर्णय पर नहीं पहुँचा जा सका और 1 दिसम्बर 1931 को यह सम्मेलन समाप्त हो गया। गाँधीजी द्वारा 30 नवम्बर 1931 को सम्मेलन में कहा गया कि अन्य सभी दल साम्प्रदायिक हैं, कांग्रेस ही केवल सम्पूर्ण भारत और सर्वहितों का प्रतिनिधित्व करती है। कांग्रेस नस्ल भेद और धर्म का भेदभाव नहीं जानती, कांग्रेस ही ऐसी संस्था है जिसका प्रभाव देश के 70 हजार गाँवों में है।

लंदन से गाँधीजी के वापस आने के पश्चात् लार्ड वेलिंगटन द्वारा गाँधी–इरविन पैक्ट का उल्लंघन प्रारम्भ कर दिया गया। फलतः 3 जनवरी 1932 को महात्मा गाँधी ने पुनः राष्ट्र का सविनय अवज्ञा आन्दोलन को प्रारम्भ करने का आह्वान किया। इसके अगले ही दिन गाँधीजी और सरदार पटेल को गिरफ्तार कर कांग्रेस को गैरकानूनी संगठन घोषित कर दिया गया। कांग्रेस अभी आन्दोलन के लिए पूर्ण रूप से तैयार नहीं थी और अंग्रेजों का दमनचक्र प्रारम्भ हो गया। पूरे देश में लगभग 1,20,000 व्यक्तियों को गिरफ्तार किया गया। धीरे–धीरे यह आन्दोलन स्वतः समाप्त हो गया।

भारत छोड़ो आन्दोलन, भारतीय स्वतन्त्रता के इतिहास में अगस्त क्रान्ति के नाम से भी प्रसिद्ध है। यह गाँधीजी के नेतृत्व में कांग्रेस का अंग्रेजी सरकार के विरुद्ध अन्तिम राष्ट्रीय आन्दोलन था। द्वितीय विश्वयुद्ध में भारतीयों का सहयोग प्राप्त करने, वैश्विक दबाव एवं जापान के भारत पर बढ़ते आक्रमण के खतरे के कारण, ब्रिटिश सरकार द्वारा क्रिप्स मिशन को भारतीय समस्या पर विचार करने के लिए भारत भेजा, लेकिन उनके प्रस्तावों पर सहमति न बनने के कारण भारत के प्रमुख राजनीतिक दलों ने इसे अस्वीकार कर दिया। इस विषय में मौलाना आजाद ने लिखा है कि, ''कांग्रेस और क्रिप्स में जो लम्बी बातचीत चली वह संसार को यह सिद्ध करने के लिए थी कि कांग्रेस भारत की सच्ची प्रतिनिधि संस्था नहीं है और भारतीयों की फूट वास्तविक कारण था जिससे अंग्रेज इनको कोई भी शक्ति देने में असमर्थ हैं।'' (मौलाना अब्दुल कलाम आजाद, इण्डिया विन्स फ्रीडम, पेज 70)

जापानी आक्रमण के भय से पूर्वी बंगाल की परिस्थितियाँ बहुत विषम हो गयी थीं। भारतीयों की जनभावना थी कि यदि अंग्रेज भारत छोड़ देंगे तो जापान भारत पर आक्रमण नहीं करेगा। इस विषय में 'हरिजन' समाचार–पत्र (5 जुलाई 1942) में गाँधीजी ने लिखा कि अंग्रेजों भारत को जापान के लिए मत छोड़ो, बल्कि भारत, भारतीयों के लिए व्यवस्थित रूप से छोड़ जाओ। गाँधीजी इन परिस्थितियों में निष्क्रिय न रहकर अंग्रेजी सरकार के विरुद्ध प्रत्यक्ष कार्यवाही करना चाहते थे, फलतः 14 जुलाई 1942 को वर्धा में कांग्रेस कार्यसमिति की बैठक में अंग्रेजी सरकार की भारत में समाप्ति का प्रस्ताव स्वीकृत हुआ जो 'वर्धा प्रस्ताव' के नाम से प्रसिद्ध है। 1 अगस्त 1942 को इलाहाबाद में तिलक दिवस पर जवाहरलाल नेहरु ने कहा कि, ''हम आग से खेलने जा रहे हैं।'' वर्धा प्रस्ताव के अनुसार बम्बई में कांग्रेस के सम्मेलन में 'भारत छोड़ो' प्रस्ताव को पारित कर दिया गया। गाँधीजी द्वारा इस कार्यसमिति के सम्मुख 70 मिनट तक भाषण दिया गया। इस विषय में पट्टाभिसीतारामय्या ने कहा है कि, ''वास्तव में गाँधीजी उस दिन एक अवतार और पैगम्बर की शक्ति से प्रेरित होकर भाषण दे रहे थे।'' उन्होंने 'करो या मरो' का नारा भी दिया, लेकिन आन्दोलन को पूर्व की भाँति अहिंसक रखने का आह्वान भी किया गया।

गाँधीजी आन्दोलन को प्रारम्भ करने से पूर्व अंग्रेजी सरकार से वार्तालाप करने के पक्ष में थे, लेकिन आन्दोलन से पूर्व ही 9 अगस्त 1942 को गाँधीजी सहित कार्यसमिति के प्रमुख सदस्यों

को गिरफ्तार कर लिया गया। कांग्रेस को अवैध संस्था घोषित कर उसके कोष को भी जब्त कर लिया गया। जनता नेतृत्वविहीन हो गई। उसने गाँधीजी के दिये गये नारे 'करो या मरो' को मूल मंत्र मानकर सम्पूर्ण देश में हड़ताल, धरना, प्रदर्शन, जुलूस, सभायें प्रारम्भ कर दिये। सरकार के दमनचक्र के कारण नागरिकों का शान्तिपूर्ण विरोध हिंसक हो गया। फलतः सरकार की दमनात्मक कार्यवाही में भी वृद्धि होती गयी। आन्दोलन को कुचलने के लिए सेना का भी प्रयोग किया गया। बिहार के एक गाँव में 21 व 22 अगस्त तथा सितम्बर 1942 को मशीनगनों द्वारा लोगों को मारा गया। जनता द्वारा भी सरकार की दमनात्मक कार्यवाही के प्रतिकारस्वरूप सरकारी सम्पत्ति, अधिकारियों व संचार के साधनों को हानि पहुँचाई, लेकिन मुस्लिम लीग, राजा, रायबहादुर आदि इस आन्दोलन से विरत रहे। गाँधीजी को 9 मई 1944 को रिहा कर दिया गया। प्रमुख नेतृत्व की गिरफ्तारी, संगठित आयोजन के अभाव, सरकारी व उच्च वर्ग की सरकार के प्रति भक्ति, विशाल सरकारी तंत्र आदि के कारण भले ही यह आन्दोलन तात्कालिक रूप से भारत को स्वतन्त्रता प्राप्ति में सहायक नहीं रहा, लेकिन इस आन्दोलन के उपरान्त ब्रिटिश सरकार को यह ज्ञान हो गया था कि वह अब अधिक समय तक भारत को अपने अधीन नहीं रख सकती। विश्व जनमत भी भारत की स्वतन्त्रता के पक्ष में हो गया था। इस आन्दोलन के पश्चात् ब्रिटिश सरकार द्वारा भी भारत की स्वतन्त्रता के लिए गम्भीर प्रयास किये जाने लगे।

गाँधीजी द्वारा नेतृत्व प्रदत्त प्रमुख आन्दोलनों के विश्लेषण उपरान्त निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि भारतीय स्वतन्त्रता आन्दोलन को एक संगठित राष्ट्रीय स्वरूप गाँधीजी के नेतृत्व में प्राप्त हुआ। गाँधीजी द्वारा नेतृत्व प्रदान कर जिन आन्दोलनों का संचालन किया गया, वह कुछ तात्कालिक रूप से और राष्ट्रीय आन्दोलन दीर्घकालिक परिणाम की दृष्टि से सफल रहे। एक आन्दोलनकारी के रूप में गाँधीजी ने स्वतन्त्रता आन्दोलन को जनआन्दोलन के रूप में परिवर्तित कर दिया था। आन्दोलन के लिए उन्होंने अहिंसात्मक क्रान्ति के मार्ग को अपनाया, जिस कारण उन्हें जनसाधारण विशिष्टतः महिलाओं का भी समर्थन मिला। स्वतन्त्रता आन्दोलन ने केवल राजनीतिक ही नहीं अपितु सामाजिक, धार्मिक, आर्थिक, शैक्षणिक स्वरूप को प्राप्त किया। सामाजिक रूप से जहाँ गाँधीजी द्वारा अस्पृश्यता निषेध, मद्यनिषेध, स्त्री उत्थान जैसे कार्यक्रमों को बढ़ावा दिया, वहीं आर्थिक क्षेत्र में मजदूरों एवं कृषकों की समस्याओं से सम्बन्धित आन्दोलनों का नेतृत्व, कुटीर उद्योगों को बढ़ावा, ग्रामीण उद्योग समिति का विचार एवं चरखा चलाने जैसे कार्यक्रम भी प्रस्तुत किये। शैक्षणिक क्षेत्र में उन्होंने प्राइमरी शिक्षा को बढ़ावा दिया एवं स्वदेशी आन्दोलन के फलस्वरूप देश में अनेक शैक्षणिक संस्थायें स्थापित की गईं। राजनीतिक रूप से उन्होंने स्थानीय स्वशासन का समर्थन कर पंचायती व्यवस्था को महत्त्व दिया, राजनीतिक दृष्टि से गाँधीजी के आन्दोलनों ने जनता को इतना प्रशिक्षित कर दिया कि 'भारत छोड़ो आन्दोलन' तो गाँधीजी को जेल भेजे जाने के पश्चात् उनके नारे 'करो या मरो' से प्रेरणा लेकर, जनता द्वारा इस आन्दोलन का नेतृत्व स्वयं किया गया, जिसके पश्चात् अंग्रेज भी यह जान गये कि भारत को अब बहुत दिनों तक पराधीन नहीं रखा जा सकता है। धार्मिक क्षेत्र में भी उन्होंने एकता स्थापित करने का पूर्ण प्रयत्न किया। उनके द्वारा कम्युनल अवार्ड को स्वीकार नहीं किया गया, लेकिन वह भारत विभाजन को रोकने में सफल नहीं रहे। गाँधीजी केवल राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक आन्दोलनकारी ही नहीं, अपितु एक मनोवैज्ञानिक आन्दोलनकारी भी थे। उन्होंने पशुबल को आत्मिक बल से विजित करने का मार्ग दिखाया, साथ ही उन्होंने मनोवैज्ञानिक रूप से जनता के मन से सरकार व नौकरशाही का

भय निकालकर उसे आन्दोलन के लिए तैयार किया।

गाँधीजी के नीतिगत मार्गदर्शन, विश्व शान्ति, अहिंसा और सत्याग्रह के मार्ग ने भारत ही नहीं, विश्व को भी प्रभावित किया। मार्टिन लूथर किंग जूनियर ने अपनी पुस्तक 'प्रिलग्रिमेज टू नान वायलेंस' में कहा है कि, ''जितना ज्यादा मैं गाँधीजी के दर्शन की गहराई में डूबता गया, प्रेम की शक्ति के बारे में उतना ही ज्यादा संदेह कम होता गया।'' नेलसन मंडेला, डेसमंड टुटु भी गाँधीजी के विचारों से बहुत प्रभावित थे। गाँधीजी के सम्मान में संयुक्त राष्ट्र द्वारा 2007 से गाँधी जयन्ती को विश्व अहिंसा दिवस मनाने की घोषणा की गई है।

निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि गाँधीजी एक सच्चे आन्दोलनकारी थे। उन्होंने आन्दोलन को केवल राजनीति तक ही सीमित नहीं रखा, अपितु जीवन के सभी पहलुओं को उद्वेलित किया। वह एक दृढ़प्रतिज्ञ आन्दोलनकर्ता थे। चौरी–चौरा घटना के पश्चात् आन्दोलन को अकस्मात् बंद कर देने का निर्णय लेना, महात्मा गाँधी जैसा दृढ़ इच्छाशक्ति नेतृत्व ही कर सकता है। वह अपने निजी हित के लिए नहीं लड़े, किसी पद के आकांक्षी नहीं थे, उनका राष्ट्रीय आन्दोलन में योगदान अविस्मरणीय है।

सन्दर्भ ग्रन्थ

1. Chandra Bipin, India's Struggle for Independence, Penguin Books India Ltd., 1988
2. Mahajan V.D., Modern Indian History, S. Chand & Company Pvt. Ltd., New Delhi, 1988
3. Puri B.N., The Indian Freedom Struggle: A Survey M.N. Publishers, New Delhi, 1988
4. Sen S.N., History of the Freedom Movement of India (1857-1947), Wiley Eastern Limited, New Delhi, 1989
5. ग्रोवर बी0एल0, यशपाल, आधुनिक भारत का इतिहासः एक नवीन मूल्यांकन, एस0 चन्द एण्ड कम्पनी प्रा0लि0, नई दिल्ली, 1988
6. वर्मा डॉ0 दीनानाथ, आधुनिक भारत का इतिहास, ज्ञानदा प्रकाशन, नई दिल्ली, 2009
7. सीतारामय्या डॉ0 बी0 पट्टाभि, कांग्रेस का इतिहास, खण्ड–1,2, सस्ता साहित्य मण्डल, नई दिल्ली, 2009